अपरोक्षानुभूति of शंकराचार्य with the commentary in Hindi by पं॰ हरिशंकर शास्त्री.
हरिद्वार, 1899.



(5)

1421

* श्रीमच्छङ्कराचार्य्य विरचित *

॥ अपरोक्षानुभूति ॥

॥ भाषा टीका सहित ॥

जिसको

नजीबाबाद निवासी दैवज्ञ पण्डित
कुन्दनलालात्मज पण्डित हरि-
शङ्करजी शास्त्रीकृत भाषाटीका
सहित बम्बई टाइप से

"डायमन्ड जुबिली प्रेस" रेलबाजार कानपूरमें छपाया

मिलने का पता :-

पण्डित हरिशंकर जी शास्त्री
अध्यक्ष संस्कृत महाविद्यालय
हरिद्वार

प्रथमवार १०००प्रति] सन् १८९९ [[redacted]

॥ अपरोक्षानुभूति ॥

श्रीहरिंपरमानन्द मुपदेष्टारमीश्वरं। व्यापकंसर्व्वलोकानां कारणंतंनमाम्यहम् ॥१॥

परमानन्द स्वरूप जगत् का उपदेष्टा ईश्वर सर्वव्यापी सब के कारण श्री हरि को प्रणाम करता हूँ ॥१॥

अपरोक्षानुभूतिर्वै प्रोच्यतेक्षोक्षसिद्धये। सद्भिरेवप्रयत्नेन वीक्षणीयामहुर्मुहुः ॥२॥

मोक्ष की सिद्धि के निमित्त अपरोक्षानुभूति करता हूं। साधुगण यत्न पूर्वक देखें ॥२॥

सवर्णाश्रमधर्म्मेण तपसाहरितोषणात्। साधनुभवेत्पुंसां वैराग्यादिचतुष्टयम् ॥३॥

वर्णाश्रम धर्म्मतपस्या और हरितोषण में मनुष्यों के वैराग्यादि (वैराग्य नित्यानित्य वस्तु विवेक शमदमादि सम्पत्ति और मुमुक्षुत्व) चार साधन सम्पन्न हैं ॥३॥

ब्रह्मादिस्थावरान्तेषु वैराग्यंविषयेष्वनु। यथैवकाकविष्ठायां वैराग्यंतद्धिनिर्म्मलं ॥४॥

मनुष्य काकविष्ठा से जिसप्रकार घृणा करते हैं इसी प्रकार जो ब्रह्म से स्थावर पर्य्यन्त विषय में वैराग्य उसकोही निर्म्मल वैराग्य कहते हैं ॥४॥

नित्यमात्मस्वरूपंहि दृश्यंतद्विपरीतगम्।

एवंयोनिश्चयःसम्यक् विवेकोवस्तुनःसवै ॥५॥

आत्मा नित्य और दृश्य अर्थात् जगत् अनित्य है इस प्रकार जो निश्चय है, उसकोही उत्तम वस्तु विवेक कहते हैं ५

सदैववासनात्यागः समोयमितिशब्दितः ।
निग्रहोवाह्यवृत्तीनां दमइत्यभिधीयते ॥६॥

वासना त्याग को और वाहिरी निग्रह को दम कहते हैं ६

विषयेभ्यःपरावृत्तिः परमोपरतिर्हिसा । स
हनंसर्व्वदुःखानां तितीक्षासाशुभामता ॥७॥

विषय से परावृत्ति को परमा उपरति कहते हैं सर्व प्रकार के दुःखसह को तितीक्षा कहते हैं, तितीक्षा अतिशय मङ्गल कारिणी है ॥७॥

निगमाचार्य्यवाक्येषुभक्तिःश्रद्धेतिविश्रुता
चित्तैकाग्र्यन्तुसंलक्ष्ये समाधानमितिस्मृतम् ८

वेद और गुरु वाक्य में भक्तिको श्रद्धा कहते हैं, संलक्ष्य में चित्तकी एकाग्रता को समाधि कहते हैं ॥८॥

संसारवन्धनिर्म्मुक्तिः कथंकस्यान्मेकदाविधे
इतियासुदृढावुद्धि र्व्वक्तव्यासामुमुक्षुता ॥९॥

"किस प्रकार कब संसार बन्धन छूटेगा" इस प्रकारजो सुदृढ़ बुद्धि है, उसको मुमुक्षुता कहते हैं ॥९॥

उक्तसाधनउक्तेन विचारःपुरुषेणहि ।
कर्त्तव्योज्ञानसिद्ध्यर्थमात्मनःशुभमिच्छता १०

उक्त (वैराग्यादि) साधन सम्पन्न मङ्गल की इच्छा करने वाला पुरुष ज्ञान सिद्धि निमित्त विचार करे ॥१०॥

नात्पद्यतेविनाज्ञानं विचारोनान्यसाधनैः
यथापदार्थभाणंहि प्रकाशेनाविनाक्वचित् ११।

विचार विना अन्य प्रकार साधन में ज्ञान उत्पन्न नहीं होता। जिस प्रकार कभी सूर्य्यादि प्रकाश विना घटादि पदार्थ का ज्ञान नहीं होता ॥११॥

कोऽहंकथमिदंजातं कोवैकर्त्तास्थविद्यते।
उपदानंकिमस्तीह विचारःसोऽयमीदृशः १२॥

मैं कौन हूं? यह जगत् किस प्रकार उत्पन्न हुआहै। कौन इसका कर्त्ता है अथवा कौन इसका उपादान है, इस प्रकार नाना प्रकार से अनुसन्धान विचार है ॥१२॥

नाहंभूतगणोदेहो नाहंचाक्षगणस्तथा।
एतद्विलक्षणःकश्चिविचारःसोऽयमीदृशः॥१३॥

आत्माभूत समष्टिरूप देह नहींहै और इन्द्रियगणभी नहीं हैं, इनसे पृथक् है, इसप्रकार तत्वानुसन्धानही विचार है॥

अज्ञानात्प्रभवंसर्व्वं ज्ञानेनप्रविलीयते।
संकल्पोविविधःकर्त्ता विचारःसोयमीदृशः४१

सम्पूर्ण जगत् ज्ञान प्रभव अर्थात् अज्ञान हेतु से कल्पना हुआ है, ज्ञान के द्वारा नष्ट होता है, अर्थात् ज्ञान का प्रकाश होने से स्वरूप जाना जासकताहै, अतएव फिर कल्पना नहीं

रहता, अनेक प्रकार के संकल्पही इनके कर्त्ता हैं, इस प्रकार अनुसन्धानही विचार है १४॥

एतयोर्यदुपादानां एकंसूक्ष्मंसदव्ययम्।
यथैवमृद्घटादिनां विचारःसोऽयमीदृशः१५॥

जिस प्रकार मृत्तिका घटादि का उपादान है इसी प्रकार जो अज्ञान और संकल्प के उपादान हैं। वही जगत् के उपादान हैं। वह अद्वितीय सूक्ष्मनित्य और अव्यय (नाशरहित) हैं, इस प्रकार निरूपणही विचार है ॥१५॥

अहमेकोऽहिसूक्ष्मश्च ज्ञातासाक्षीसदव्ययः।
तदहंनात्रसन्देहो विचारःसोऽयमीदृशः॥१६॥

अहं प्रतिपाद्य अर्थात् आत्मा एक अतिसूक्ष्म ज्ञाता सर्व्व साक्षी नित्य और अव्यय है अहं प्रतिपाद्यही ब्रह्म है, इस में सन्देह नहीं इसप्रकार तत्व निर्णयही विचार है ॥१६॥

आत्माविनिष्कलोह्येको देहोवहुभिरावृतः
तयोरैक्यंप्रपश्यन्ति किमज्ञानमतःपरम् १७

आत्मा विनिष्कलअर्थात् अवयव विहीन, देहवहु अवयव युक्त है, मूर्ख इस में ही समता देखते हैं इस से और अज्ञान क्या है ॥१७॥

आत्मानियामकश्चान्त र्देहोनियम्यवाह्यकः।
तयोरैक्यंप्रपश्यन्ति किमज्ञानमतःपरम्१८॥

आत्मा अन्तरस्थ और नियामक है, देह वाहर और

नियम्य है, मूर्खगण इसमेंहो समता देखते हैं इसके अतिरिक्त और अज्ञान क्या है ॥१८॥

आत्माज्ञानमयःपुण्यो देहोमांसमयोशुचिः।
तयोरैक्यंप्रपश्यन्ति किमज्ञानमतःपरम् १९॥

आत्मा ज्ञान मय और पवित्र है, देह मांसमय और अपवित्र है, मूर्खगण इसमेंही समता देखते हैं, इसके अतिरिक्त और अज्ञान क्या है ॥१७॥

आत्माप्रकाशकःस्वच्छो देहस्तामसउच्यते
तयोरैक्यंप्रपश्यन्ति किमज्ञानमतःपरम् २०॥

आत्मा प्रकाशक और स्वच्छहै, देह तामस अर्थात् घटादि को समान प्रकाश्य है, मूर्खगण इस मेंहो समता देखते है इस के अतिरिक्त और अज्ञान क्या है ॥२०॥

आत्मानित्योहिसद्रूपदेहोऽनित्योह्यसन्मयः
तयोरैक्यंप्रपश्यन्ति किमज्ञानमतःपरम् २१॥

आत्मा नित्य कारण और सत्स्वरूप है, देह अनित्य कारण असत्स्वरूप है, मूर्खगण इसमेंहो समता देखते हैं, इस के अतिरिक्त और अज्ञान क्या है ॥२१॥

आत्मानस्तत्प्रकाशत्वं यंपदार्थावभासनं।
नाऽन्यादिदीप्तिवद्दीप्ति र्भवत्यान्ध्यंयतोनिशि

जिस प्रकार घटादि पदार्थ का प्रकाशहै, उसमेंही आत्मा का प्रकाशहै, अग्नि इत्यादिका दीप्ति को समान आत्मप्रकाश

का विकार नहीं है, जिस प्रकार रात्रि में अन्धकार होताहै। अर्थात् रात्रि काल में जिस स्थान में प्रकाश होता है, किन्तु दीपक के बुझ जानेपर अन्धकार होजाता है इस से जाना जाता है कि अग्नि का दीपक विकार है किन्तु आत्मा दीपक का विकार नहीं वह सदा सर्व्वत्रही रहता है ॥२२॥

देहोऽहमीत्ययंमूढो धृत्वातिष्ठत्यहोजनः।
ममायमित्यपिज्ञात्वा घटद्रष्टेवसर्व्वदा २३

मनुष्य एक घट पानेपर "मेराघट" इसप्रकार जानता है "मैं घट" इसप्रकार नहीं जानता, किन्तु मूढ़गण "मेरा देह" इस प्रकार जानकर भी मैंही देह इसप्रकार जानते हैं ॥२३॥

ब्रह्मैवाहंसमःशान्तः सच्चिदानंदलक्षणः।
नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमत्युच्यतेबुधैः ॥२४॥

मैं सम अर्थात् प्रकाश द्वारा सर्व्वमय शान्त अर्थात् निर्व्विकार सच्चिदानन्दस्वरूप ब्रह्महूं असत्स्वरूप देहनहीं इसप्रकार ज्ञान कोही पण्डितगण तत्त्व ज्ञान कहते हैं ॥२४॥

निर्व्विकारोनिराकारो निरवद्योऽहमव्ययः।
नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमत्युच्यतेबुधैः ॥२५॥

मैं निर्व्विकार निराकार निरवद्य अर्थात् आध्यात्मिकादि तीनों ताप हीन और अव्यअर्थात् विनाश हीनहूँ असत्स्वरूप देह नहीं इसप्रकार ज्ञान कोही पण्डितगण तत्त्वज्ञान कहते हैं॥

निरामयोनिराभासो निर्व्विकल्पोहमाततः।

नाहंदेहोह्यसद्रूपा ज्ञानमत्युच्यतेबुधैः ॥२६॥

मैं रोग हीन फलाभिलाष शून्य कल्पना रहित और सर्व्व व्यापी हूं मैं असत्स्वरूप देह नहीं इसप्रकार ज्ञान को पण्डितगण तत्व ज्ञान कहते हैं ॥२६॥

निर्गुणोनिष्क्रियोनित्योनित्यमुक्तोहमच्युतः
नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमत्युच्यतेबुधैः ॥२७॥

मैं निर्गुण क्रिया विहीन नित्य नित्य मुक्त अर्थात् सर्व्व दाही बन्धन शून्य और अच्युत अर्थात् सच्चिदानन्द स्वरूप हूं। मैं असत्स्वरूप देह नहीं। इस प्रकार ज्ञानको पण्डितगण तत्व ज्ञान कहते हैं ॥२८॥

निर्म्मलोनिश्चलोऽनन्तः शुद्धोहमजरोऽमरः
नाहंदेहोह्यसद्रूपो ज्ञानमत्युच्यतेबुधैः ॥२८॥

मैं निर्म्मल निश्चल अनन्त शुद्ध अजर और अमर हूं। मैं असत्स्वरूप देह नहीं। इस प्रकार ज्ञान को पण्डितगण तत्व ज्ञान कहते हैं ॥२८॥

स्वदेहेशोभनंसान्तं पुरुषाख्यञ्चसम्मतम् ।
किंमूर्खशून्यमात्मानं देहातीतंकरषोभोः॥२९॥

अहो मूर्ख ! तुम अपनी देह में विद्यमान मङ्गलमय ब्रह्म स्वरूपमें निर्णीत देहातीत पुरुषोत्तम आत्माको शून्यजानतेहो

स्वात्मानंशृणुमूर्खत्वं युक्त्याश्रुत्याचपुरुषम्
देहातीतंसदाकारं सुदुर्द्दर्शंभवादृशैः ॥३०॥

युक्ति और श्रुति द्वारा आत्मा को देहातीत निर्णयकरो। वह सदाकार अर्थात् "आत्मा" है इसप्रकार व्यवहारके कारण ही आत्मा का आकार है किन्तु तुम्हारी समान, मूर्खगण उस को नहीं देख सकते ॥३०॥

अहंशब्देनविख्याता एकएवस्थितःपरः।
स्थूलस्त्वनेकतांप्राप्तःकथंस्याद्देहकःपुमान् ३१

अहं शब्द प्रतिपाद्य परमआत्मा एक है, स्थूल देह अनेक हैं, । तो वह किस प्रकार से देहमय होगा ॥३१॥

अहंद्रष्टृतयासिद्धो देहोऽदृश्यतयास्थितः।
ममायमितिनिर्देशात् कथंस्याद्देहकःपुमान् ३२

"यह आत्मा" इस प्रकार निर्देश वशतः आत्मा द्रष्टा और देह दृश्य है, इस प्रकार प्रतीयमान होता है, तो वह किस प्रकार देहमय होगा ॥३२॥

अहंविकारहीनस्तु देहोनित्यंविकारवान्।
इतिप्रतीयतेसाक्षात् कथंस्याद्देहकःपुमान् ३३

आत्मा विकारहीन और देह वरावर विकार वान है, यह साक्षात् प्रतीयमान होता है तो देह किस प्रकार आत्मा होगा ॥३३॥

यस्मात्परमितिश्रुत्या तयापुरुषलक्षणं।
विनिर्णीतंविमूढेन कथंस्याद्देहकःपुमान् ३४

"यस्मात् परं नापरमस्ति किञ्चित् यस्मान्नाणीयो नज्या

योऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्ये कस्ते नेदं पूर्ण पुरुषेण सर्व्वम्" ॥ अर्थात् जो पर और अपर कुछ उत्कृष्ट तर नहीं है। जिससे सूक्ष्मतर नहीं है, जिससे कुछ प्रधान नहीं है जो एक आत्मा वृक्ष की समान स्तब्ध होकर स्वर्गमें बर्त्तमान है, उसी आत्माने इस सम्पूर्ण जगत् परिपूर्ण रक्खा है यह श्रुति द्वारा परमात्मा का लक्षण निर्णीत हुआ है, तो वह आत्मा किस प्रकार देहमय होगा ॥३४॥

सर्व्वंपुरूषएवेति युक्तेपुरुषसंज्ञिते। अप्यु
च्यतेयतःश्रुत्या कथंस्याद्देहकःपुमान् ॥३५॥

"पुरुष एवदं सर्व्वम्" अर्थात् सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड आत्मस्व रूपहै। यह श्रुति निर्णीत आत्मा किस प्रकार देहमय होगा॥

असङ्गःपुरुषःप्रोक्ता बृहदारण्यकेऽपिच।
अनन्तमलसंस्लिष्टः कथंस्याद्देहकःपुमान् ३६

बृहदारण्य के उपनिषद मेंभी "असङ्गोऽयम्पुरुषः" अर्थात् आत्मा सङ्गहीन कथित हुआ है, किन्तु देह अनन्त मल युक्त है, तो आत्मा किस प्रकार देहमय होगा ॥३६॥

तत्रैवचसमाख्यातः स्वयंज्योतिर्हिपुरुषः।
जड़ःपरप्रकाश्येऽसौ कथंस्याद्देहकःपुमान् ३७

उस बृहदारण्य की श्रुतिमेंही "पुरुषःज्योतिर्म्मय" यह कथित है, किन्तु देह घटादि की समान प्रकाश्य जड़ पदार्थ है, तो आत्मा किस प्रकार देहमय होगा ॥३७॥

प्रोक्तोऽपिकर्म्मकाण्डे नह्यात्मादेहाद्विलक्षणः
नित्यश्चतत्फलंभुङ्क्ते देहपातादनन्तरम् ३८

"यावज्जीवमग्निहोत्रंजुहुयात्" अर्थात् जब तक जीवन रहे तबतक अग्निहोत्र यागकरे, इत्यादि कर्म्मकाण्ड विभाग में भी आत्मा देह के अतिरिक्त और नित्य देहपात के उपरान्त कर्म्मफल भोग करे, यह कथित है अतएव इसके द्वारा आत्मा देहातीत प्रतीयमान होता है ॥३८॥

लिङ्गञ्चानेकसंयुक्तं चलदृश्यंविकारिच । अ
व्यापकमसद्रूपंतत् कथंस्यात्पुमानयम् ॥ ३९॥

लिङ्गः और कारण यह दोनो शरीरही नानास्थूल शरीर में सम्बन्ध युक्त चञ्चल विकार युक्त अव्यापक और असत् स्वरूप है, तो आत्मा किस प्रकार देहमय होगा ॥३९॥

एवंदेहद्वयादन्य आत्मापुरुषईश्वरः । सर्व्वा
त्मासर्व्वरूपञ्च सर्व्वातीतोहमव्ययः ॥४०॥

आत्मास्थूल और सूक्ष्म इन दोनो देहसे अतिरिक्त और ईश्वर है । वह सर्व्वात्मा सर्व्वरूप सर्व्वातीत और अव्ययहै ४०

इत्यात्मदेहभागेन प्रपञ्चस्यैवसत्यता । यथो
क्ता तर्क्कशास्त्रेण किन्ततःपुरुषार्थता ॥४१॥

तार्किकगण यह आत्मा और देहका विभाग दृष्टि करके भी तर्क शास्त्रोक्त प्रपञ्च की सत्यता स्वीकार करे । उसकी अपेक्षा और पुरुषार्थता क्या है, ॥४१॥

इत्यात्मदेहभेदेन देहात्मत्वंनिवारितम्।
इदानींदेहभेदस्य ह्यसत्वंस्फुटमुच्यते ॥४२॥

इस देह और आत्मा का भेद देखने से देह को आत्मता निवारित हुई। इस समय देह भेद की असत्ता स्पष्ट रूप से कही जाती है ॥४२॥

चैतन्यस्यैकरूपत्वाद् भेदोयुक्तोनकर्हिचित्
जीवत्वञ्चमृषाज्ञेयं रज्जौसर्पग्रहोयथा ॥४३॥

चैतन्यका (भूत और भौतिक प्रपञ्च के आधान के प्रकाश को चैतन्य कहते हैं) एक रूपता हेतु भेद कभी युक्ति युक्त नहीं है। जिस प्रकार रज्जु में सर्प का भ्रम होता है, इसी प्रकार आत्मा मेंभी जीवत्व मिथ्या है ॥४३॥

रज्ज्वज्ञानात्क्षणेनैव यद्वद्रज्जुर्हिसर्पिणी।
भातितद्वच्चितिःसाक्षा द्विश्वाकारेणकेवला ४४

रज्जु स्वरूप का ज्ञान होने से जिस प्रकार रज्जुमें सर्पका भ्रम होता है, इसी प्रकार आत्मा स्वरूप का अज्ञान वशतः आत्मा नानारूप से कल्पित होता है ॥४४॥

उपादानंप्रपञ्चस्य ब्रह्मणोऽन्यन्नविद्यते।
तस्मात्सर्व्वप्रपञ्चोऽयं ब्रह्मैवास्तिनचेतरत्४५

ब्रह्म बिना और प्रपञ्च का उपादान नहीं है, अतएव सम्पूर्ण प्रपञ्चही ब्रह्म है, और कुछ नहीं है ॥४५॥

व्याप्यव्यापकतामिथ्या सर्व्वमात्मेतिशासनात्।

इतिज्ञातेपरेतत्वे भेदस्यावसरकुतः ॥४६॥

यह सम्पूर्ण प्रपञ्च आत्मा स्वरूप है, इस प्रकार श्रुतिप्रमाण से आत्मा की व्याप्य और व्यापकता मिथ्या है, यह प्रतीय मान होता है। इस प्रकार से परमात्मतत्व ज्ञान होनेपर फिर भेद ज्ञान का अवसर कहां है ॥४६॥

श्रुत्वानिवारितंन्यूनं नानात्वंस्वमुखेनहि ।
कथंभासोभवेदन्यः स्थितेचाद्वयकारणे ॥४७॥

श्रुति ने स्वयंही जगत् का नानात्व निवारण किया है, ब्रह्म की अद्वितीय कारण स्थिर होनेपर किस प्रकार भेदज्ञान होसकता है ॥४७॥

दोषोऽपिविहितःश्रुत्या मृत्योर्मृत्युंसगच्छति
इहपश्यतिनानात्वंमाययावञ्चितोनरः ॥४८॥

"मृत्योः स मृत्यु माप्नोति यदह नानेव पश्यति" अर्थात् जो जगत् में नानत्व जानताहै, वह मृत्युके उपरान्त मृत्यु भोग करता है, अर्थात् उसको फिर मृत्यु की यातना भोग करनो होती है इत्यादि श्रुतिमे जो नानात्व देखते हैं उनका दोष भी विहित है, मायावञ्चित मनुष्यही जगत् में नानात्व देखते हैं॥

ब्रह्मणःसर्वभूतानि जायन्तेपरमात्मनः ।
तस्मादेतानिब्रह्मैवभवन्तीत्यवधारयेत्॥४९॥

ब्रह्मसेही समस्त उत्पन्न हैं,। अतएव सम्पूर्ण ब्रह्म है, इस प्रकार निश्चय करे ॥४९॥

ब्रह्मैवसर्व्वनामानि रूपाणिविविधानिच।
कर्म्माण्यपिसमग्राणि वितर्त्तीतिश्रुतिजगौ ५०

ब्रह्म ने सब प्रकार नाम विधि प्रकार रूप और समस्त कर्म्म धारण किये हैं, यह स्वयं श्रुति ने कहा है ॥५०॥

सुवर्णाज्जायमानस्य सुवर्णत्वञ्चशाश्वतम् ।
ब्रह्मणोजायमानस्य ब्रह्मत्वञ्चतथाभवेत् ५१॥

जिसप्रकार स्वर्ण से निर्म्मित हुआ द्रव्य सदाही स्वर्ण रहता है, इसी प्रकार ब्रह्म से उत्पन्न हुआ जगत् ब्रह्म के अति रिक्त और कुछ नहीं है ॥५१॥

स्वल्पमप्यन्तरंकृत्वा जीवात्परमात्मनोः ।
यस्तिष्ठतिसमूढ़ात्मा भयंतस्यभिभाषितम् ५२

जो व्यक्ति जीवात्मा में किंचिन्मात्र भेद जानते हैं, वह मूढ़ात्मा हैं, उनको भय पाना होता है, अर्थात् उनके चित्तको शान्ति नहीं होती ॥५२॥

यत्राज्ञानाद्भवेद्द्वैतमितरस्तत्रपश्यति ।
आत्मात्वेनयदासर्व्वं नेतरस्तत्रचराविपि।५३।

जिस अवस्था में अज्ञान वशतः द्वैत ज्ञान होता है उसी अवस्था में एक पदार्थ अन्य पदार्थ को देखता है, जब आत्मा ज्ञान होता है, तब अन्य कुछ नहीं देखाजाता ॥५३॥

यस्मिन्सर्व्वाणिभूतानि चात्मत्वेनविजानतः
नैवतस्यभवेन्मोहो नचशोकोद्वितीयतः ५४॥

जिस अवस्था में सर्व्व भूत को आत्मारूप में जानता है, तब अद्वैत ज्ञान वशतः शोक मोहादि नहीं रह सकता ॥५४॥

अयमात्माहिब्रह्मैव सर्व्वात्मकतयास्थितः।
इतिनिर्द्धारितंश्रुत्या बृहदारण्यसंज्ञया ॥५५॥

परमात्मा स्वरूप ब्रह्मही सर्व्वात्मकरूप अवस्थित है, यह बृहदारण्य की श्रुति में निर्द्धारित है ॥५५॥

अनुभूतोप्ययंलोकव्यवहारक्षमोपिसन्।
असद्रूपोयथास्वप्न उत्तरक्षणवाधितः ॥५६॥
स्वप्नोजागरणेऽलीकः स्वप्नेजागरणोपिहि।
द्वयमेवलयेनास्ति लयोऽपिउभयोर्नच ॥५७॥

जिस प्रकार स्वप्नावस्था में स्वप्न दृश्य पदार्थ सम्पूर्णही सत् हैं इसीप्रकार ज्ञान होताहै। स्वप्न के कुछ काल उपरान्तही असत्यत्व प्रतीत होता है, इसी प्रकार यह लोक व्यवहार योग्य होने से असत् स्वरूप जाग्रद अवस्था में स्वप्न मिथ्या है, स्वप्नावस्था में जागरण मिथ्या है, सुषुप्ति अवस्था में जागरण और स्वप्न दोनों मिथ्या हैं, एवं जागरण और स्वप्न दोनों अवस्था में सुषुप्ति मिथ्या प्रतीयमान होती है ॥५६-५७॥

त्रयमेवभवेन्मिथ्या गुणत्रयविनिर्म्मितं।
अस्यद्रष्टागुणातीतो नित्योह्येकश्चिदात्मकः॥

तीनों गुण विनिर्म्मित जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति यह तीनों अवस्था मिथ्या हैं इन तीनों अवस्थाओंका गुणातीत चित्स्व रूप आत्माही सत्य है ॥५८॥

यद्वन्मृदि घटभ्रान्तिं शुक्तौवा रजतस्थितं।
तद्वद्ब्रह्मणि जीवत्वं वीक्ष्यमाणे न पश्यति ५९

जिस प्रकार मृत्तिका में घट भ्रम और सोपी में रजतभ्रम होता है, इसी प्रकार ब्रह्म में जीवन भ्रम होता है, आत्मा साक्षात्कार होनेपर फिर भ्रम नहीं रहता ॥५९॥

यथा मृदि घटो नाम कनके कुण्डलाभिधा।
शुक्तौ हि रजतख्याति जीवशब्दस्तथा परे ६०

जिस प्रकार मृत्तिका में घट संज्ञा, स्वर्ण में कुण्डल संज्ञा और सोपी में रजत ख्याति होती है, इसी प्रकार परमात्मामें जीव संज्ञा है ॥५०॥

यथैव व्योम्नि नीलत्वं यथा तीरं मरुस्थले।
पुरुषत्वं यथा स्थाणौ तद्वद्विश्वं चिदात्मनि ६१

जिस प्रकार आकाश में नीलता मरुभूमि में जल और स्थाणु अर्थात् शाखाहीन वृक्ष में पुरुषता है इसीप्रकार चिन्मय परमात्मा में यह विश्व नाम मात्र है ॥६१॥

यथैव शून्ये वेतालो गन्धर्व्वाणां पुरं यथा।
यथाकाशे द्विचन्द्रत्वं तद्वत् सत्ये जगत्स्थितः ६२

जिस प्रकार निर्ज्जन स्थान में वेताल, शून्य में गन्धर्व्व नगर, आकाशमें दो चन्द्र हैं, जगत्की सत्यता भी इसीप्रकार है॥

यथा तरङ्गकल्लोलैर्ज्जलमेव स्फुरत्यलम्।
पात्ररूपेण ताम्रं हि ब्रह्माण्डौघैस्तथात्मता ६३

जिसप्रकार जळ तरङ्गाकार में दिखाई देता है ताम्रपात्रा कारमें दिखा देता है आत्मा अनंत ब्रह्माण्डाकारमें विद्यमानहै

घटानाम्नायथापृथ्वी पटनाम्नाहितन्तवः।
जगन्नाम्नाचिदाभाति ज्ञेयंतत्तदभावतः ६४॥

जिस प्रकार घटना में मृत्तिका को और वस्त्रनाम में सूत्र प्रकाशित होता है, इसीप्रकार चिदात्मा जगत् नाम में प्रकाश-मान होता है, क्योंकि जग मिथ्या है ॥६४॥

सर्व्वोपिव्यवहारस्तु ब्रह्मणाक्रियतेजनैः।
अज्ञानान्नविजानन्ति मृदेवहिघटादिकं॥६५॥

मनुष्य परमब्रह्मके नियमानुसारही सम्पूर्ण प्रकारके वैदिक और लौकिक व्यवहार करतेहैं, किन्तु तथापि अज्ञान वशतः कोई उन को जान नहीं सकता ॥६५॥

कार्य्यकारणतानित्यं भातिघटमृदोर्यथा।
तथैवश्रुतियुक्तिभ्यां प्रपञ्चब्रह्मणोरिह ६६॥

जिस प्रकार सर्व्वदाही मृत्तिका की कार्य्य कारणता देखो जाती है इसी प्रकार श्रुति और युक्ति मे प्रपंच जगत् और ब्रह्म का कार्य्य कारण जाना जाता है ॥६६॥

गृह्यमाणेघटेयद्वन्मृदेवयातिवैबलात।
वीक्ष्यमाणेप्रपञ्चेपि ब्रह्मैवभातिभास्करं ६७

जिस प्रकार घट के विषय चिन्ता करने मे मृत्तिकाही प्रतीत होतोहै, इसीप्रकार प्रपंच जगत् के विषय पर्य्यालोचना करने से याम ब्रह्महो प्रतीत होता है ॥६७॥

सदैवात्माविशुद्धोऽस्ति नशुद्धोभातिवैसदा।
यथैवद्विविधारज्जुर्ज्ञानिनोऽज्ञानिनोऽनिशम्

वह परमात्मा सर्व्वदा शुद्धरूपमें भी प्रकाश पाते हैं, और अशुद्धरूप में भी प्रकाश पाते हैं, जिस प्रकार एकमात्र रज्जु ज्ञानी और अज्ञानी दोनों व्यक्तिके निकट रज्जु और सर्प यह दोनोंरूप में प्रकाशित होतेहैं, अर्थात् ज्ञानी रज्जुको रज्जु देखता है और अज्ञानी को रज्जु में सर्प का भ्रम होता है ॥६८॥

यथैवमृण्मयःकुम्भस्तद्वद्देहोऽपिचिन्मयः।
आत्मानात्मविभागोऽयंमुधैवक्रियतेवुधैः ६९॥

जिस प्रकार कुम्भ मृत्तिका उसी प्रकार देह चिन्मय है, अतएव ज्ञानी व्यक्तिगण किस कारण मिथ्या आत्मानात्म जानते हैं ॥६९॥

सर्पत्वेनयथारज्जुरजतत्वेनशुक्तिका।
विनिर्म्मितावमूढेन देहत्वेनतथात्मता॥७०॥

जिस प्रकार अज्ञानी व्यक्ति रज्जु को सर्प जानते हैं, सीपी को रजत जानते हैं, इसीप्रकार अज्ञानीगण आत्माको देह जानते हैं ॥७०॥

घटत्वेनयथापृथ्वी पटत्वेनैवतन्तवः।
विनिर्म्मितावमूढेन देहत्वेनयथात्मता७१॥

जिसप्रकार पृथ्वी को घटरूप में और सूत्र को वस्त्ररूप में निर्णय करते हैं, इसीप्रकार अज्ञानीगण आत्मा को देहरूप में निर्णय करते हैं ॥७१॥

कनकंकुण्डलत्वेन तरङ्गत्वेनवैजलम्।
विनिर्म्मिताविमूढेन देहत्वेनतथात्मता ७२॥

जिसप्रकार स्वर्णको कुण्डलाकार में और जलको तरङ्गाकार में निर्णय करते हैं, इसीप्रकार अज्ञानीगण आत्मा को देह रूप में निर्णय करते हैं ॥७२॥

पुरुषत्वेनवैस्थाणुर्जलत्वेनमरीचिका।
विनिर्म्मिताविमूढेन देहत्वेनतथात्मता ७३॥

जिसप्रकार शाखाहीन वृक्षको पुरुषरूपमें और मरीचिका को जलरूप में जानते हैं, इसीप्रकार अज्ञानीगण आत्मा को देहरूप में निर्णय करते हैं ॥७३॥

गृहत्वेनैवकाष्ठानि खड्गत्वेनैवलोहिता।
विनिर्म्मिताविमूढेन देहत्वेनतथात्मता ७४॥

जिसप्रकार काष्ठ समूहको गृहरूपमें और लोहे को खड्ग रूप में जानते हैं, इसीप्रकार अज्ञानीगण आत्माको देहरूप में निर्णय करते हैं ॥७४॥

यथावृक्षविपर्य्यासो जलाद्भवतिकस्यचित्।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥७५॥

जिसप्रकार जलमें वृक्ष का प्रतिविम्ब पड़नेसे अज्ञानीगण उसको प्रकृत वृक्ष जानते हैं, इसी प्रकार अज्ञानवशतः आत्मा में देह जानते हैं ॥७५॥

पोतेनगच्छतःपुन्सःसर्व्वंविचञ्चलंभवेत्।

तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥७६॥

जिसप्रकार नौकापर चढ़ाहुआ व्यक्ति सम्पूर्ण पदार्थ को चञ्चल को समान जानता है इसीप्रकार अज्ञान वशतः आत्मा में देह जानता है ॥७६॥

पीतत्वंहियथाशुभ्रे दोषाद्भवतिकस्यचित् ।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः॥७७॥

जिस प्रकार कोई व्यक्ति पित्तादि दोष वशतः शुभ्रवर्ण को जान जानता है, इसी प्रकार अज्ञान वशतः आत्मा को देह जानता है ॥७७॥

चक्षुर्भ्यांभ्रमशीलाभ्यां सर्व्वंभातिभ्रमात्मकम् ।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः॥७८॥

जिस प्रकार भ्रमण शील चक्षुर्द्वारा दृष्टिपात करनेसे बोध होताहै कि सम्पूर्ण पदार्थही भ्रमण करतीहैं, इसीप्रकार अज्ञान से आत्मा में देह जानता है ॥७८॥

अलातंभ्रमणेनैव वर्त्तुलंभातिसूर्य्यवत् ।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥७९॥

जिस प्रकार जलके भीतरो भाग को परिभ्रामित करने मे वह जल सूर्य को समान गोलाकार बोध होता है, इसो प्रकार अज्ञान के वश आत्मा में देहका ज्ञान होता है ॥७९॥

महत्वेसर्व्ववस्तूना मणुत्वन्त्वतिदूरतः ।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८०॥

जिस प्रकार वृहदाकार वस्तुभी वहुत दूरसे अत्यन्त छोटी दिखाई देतोहै, ऐसेहीअज्ञान से आत्मा में देहका भ्रम होताहै

सूक्ष्मत्वेसर्व्वभावानां स्थूलताचोपनेत्रतः।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८१॥

जिस प्रकार उपनेत्र अर्थात् चश्मे से अत्यन्त सूक्ष्म वस्तु भी स्थूल दिखाई देती है, इसी प्रकार अज्ञान से आत्मा में देहका ज्ञान होता है ॥८१॥

काचभूमौजलत्वंवा जलभूमौहिकाचता।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८२॥

जैसे कांच भूमि में जल भ्रम और जलमें कांचका भ्रम होता है इसी प्रकार अज्ञान से आत्मा में देहका भ्रम होताहै

यद्वदग्नौमणित्वंहि मणौवावह्नितापुनः।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८३॥

जैसे अग्निमें मणित्व और मणिमें अग्नित्वका ज्ञान होता है इसी प्रकार अज्ञान से आत्मा में देहका ज्ञान होता है ८३

यथैवदिग्विपर्य्यासो मोहाद्भवतिकस्यचित्।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८४॥

जिस प्रकार आकाश में मेघोंके दौड़ने पर चन्द्रमा भी दौड़ने की समान बोध होता है, ऐसेही अज्ञान से आत्मा में देहका ज्ञान होता है ॥८४॥

अभ्रेयुसत्सुधावत्सु सोमोधावतिभातिवै।

तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८५॥

जिस प्रकार मोह हेतु किसो किसी व्यक्ति को दिक भ्रम होता है, ऐसेही अज्ञान से आत्मा में देहका ज्ञान होताहै ८५

यथाशशीजलेभाति चञ्चत्वेनकर्हिचित् ।
तद्वदात्मनिदेहत्वं पश्यत्यज्ञानयोगतः ॥८६॥

जिस प्रकार कोई कोई व्यक्ति जलको चंचलता से चन्द्र कोभो चंचल जानता है ऐसेही अज्ञान से आत्मा में देहका ज्ञान होता है ॥८६॥

एवमात्मन्यविद्यातो देहाध्यासोहिजायते ।
सएवात्मपरिज्ञानात् लीयतेचपरात्मनि ८७

इसप्रकार अविद्या से आत्मा में देहका ज्ञान होताहै किंतु आत्मतत्व ज्ञात होनेपर वह देह ज्ञान परमात्मा में लीन होता है अर्थात् तिस काल देहका आत्मत्व ज्ञान लय होजाता है ॥

सर्व्वमात्मतयाज्ञानं जगत्स्थावरजङ्गमम् ।
अभावात्सर्व्वभावानांदेहस्यचात्मताकुतः ८८

इस स्थावर जंगमात्मक जगत् को आत्म स्वरूप जानना चाहिये। क्योंकि सभी पदार्थ अनित्य है, अतएव देहकी आत्मता कैसे संभव है ॥८८॥

आत्मानंसततंजानत् कालंनयमहामते ।
प्रारब्धमखिलंभुञ्जन् नद्वेगंकर्त्तुमर्हसि ॥८९॥

हे महामते! सर्वदा आत्मा को जानकर काल व्यतीत

करो। संपूर्ण प्रारब्ध कर्मका फल भोग करो, उसमें उद्विग्न नहीं होना चाहिये ॥८९॥

उत्पन्नेप्यात्मविज्ञानं प्रारब्धंनैवमुञ्चति ।
इतियत्श्रूयतेशास्त्रात् तन्निराक्रियतेऽधुना९०

आत्मज्ञान उत्पन्न होनेपर भी प्रारब्ध रहताहै, यह जिस शास्त्र में सुना है, इस समय उसका निराकृत होता है ॥९०॥

तत्वज्ञानोदयादूर्द्धं प्रारब्धंनैवविद्यते। देहा
द्रिदीनामसत्वत्तु यथास्वप्नोविबोधतः ॥९१॥

जाग्रद् अवस्था में जिस प्रकार स्वप्न असत् हैं, इसी प्रकार देहादि के असत्व से तत्व ज्ञान का उदय होनेपर फिर प्रारब्ध नही रहता ॥९१॥

कर्म्मजन्मान्तरीयंयत्प्रारब्धमितिकीर्त्तितम्
तत्तुजन्मान्तराभावात् पुंसोनैवास्तिकर्हिचित्

जन्मान्तरीय कर्म को प्रारब्ध कहते हैं। जन्मान्तर का अभाव होने से फिर कभी प्रारब्ध नहीं रहती ॥९२॥

स्वप्नदेहोयथाध्यस्त स्तथैवायंहिदेहकः ।
अध्यस्तस्यकुतोजन्म जन्मभावेहितत्कुतः९३

स्वप्न देहकी समान इस देह और अध्यस्त (विनष्ठ) अध्यस्त का फिर जन्म किस प्रकार होसकता है और जन्म के अभाव में किस प्रकार प्रारब्ध भोगनी होगी ॥९३॥

उपादनंप्रपञ्चस्य मृद्भाण्डस्येवद्दश्यते। अज्ञा
नञ्चेतिवेदान्तै स्तस्मिन्नष्टेक्वविश्वता ॥९४॥

घटादि जिस प्रकार मृत्तिका और जल दोनों का उपादान है, इसी प्रकार प्रपंच भी ब्रह्म और अज्ञान दोनोंका उपादान है यह वेदान्त के प्रमाण में जाना जाता है, उपादान स्वरूप अज्ञान का नाश होनेपर विश्व किस प्रकार मे रहसकताहै ९४

यथारज्जुंपरित्यज्य सर्पंगृह्णातिवैभ्रमात् ।
तद्वत्सत्यमविज्ञाय जगत्पश्यतिमूढधीः ९५

जिस प्रकार भ्रमवश रज्जुका ज्ञान नहोकर सर्पज्ञान होता है, इसी प्रकार अज्ञान के वश ब्रह्म को सत्य रूप में नजानकर जगत् को मूढ़ बुद्धि व्यक्ति सत्य जानता है ॥९५॥

रज्जुरूपेपरिज्ञातेसर्पत्वन्तुनतिष्ठति। अधि
ष्ठानेतथाज्ञाते प्रपञ्चःशून्यतांगतः ॥९६॥

रज्जुका रूप परिज्ञात होनेपर जिस प्रकार सर्पका ज्ञान नहीं रहता, इसी प्रकार प्रपंच के अधिष्ठान भूत आत्मा का परिज्ञान होनेसे प्रपंच मिथ्या बोध होता है ॥९६॥

देहस्यापिप्रपञ्चत्वात्प्रारब्धावस्थितःकुतः ।
अज्ञानजनबोधार्थं प्रारब्धंवक्तिवैश्रुतिः ९७

देह भी प्रपंच है अतएव किस प्रकार मे प्रारब्ध को अव स्थिति होसकती है ? अज्ञानियों के बोध निमित्त श्रुति में प्रारब्ध उक्त हुआ है ॥९७॥

क्षीयन्तेचास्यकर्म्माणि तस्मिन्दृष्टेपरावरे ।
बहुत्वंतन्निषेधार्थं श्रुत्वागीतंयतस्फुटम् ९८

श्रुति में उक्त है कि उस परात्पर परमात्मा का दर्शन होने से संपूर्ण कर्म क्षय होते हैं। कर्म संपूर्ण (संचित क्रियमाण और प्रारब्ध) यह बहुवचन भी प्रारब्ध के अभाव का प्रतिपादन करने के निमित्त हैं ॥९८॥

उच्यतेऽज्ञैर्ब्बलाच्चैतत् तदानर्थद्वयागमः।
वेदान्तमतहानञ्च यतोज्ञानमितिश्रुतिः ॥९९॥

अनभिज्ञ गणहो बल पूर्वक प्रारब्ध स्वीकार करते हैं, उसमें प्रथम मोक्षभाव और मोक्षका अभाव होनेपर ज्ञान का उच्छेद यह दो दोष उपस्थित होते हैं और उसमे वेदान्त मतके (अद्वैत बादकी) भी हानि होती है। क्योंकि प्रारब्ध रूप द्वैत स्वीकार करने से अद्वैत बाद नहीं रह सकता। जिस से ज्ञान लाभ किया जाता है, उसको श्रुति कहते हैं। श्रुति प्रमाण न मानने से अन्य ज्ञान लाभ का उपाय नहीं है ९९.

त्रिपञ्चाङ्गान्यतोवक्ष्ये पूर्व्वोक्तस्यहिलब्धये।
तैश्चसर्व्वैःसदाकार्य्यं निदिध्यासनमेवतु १००

अनन्तर पूर्वोक्त ज्ञान लाभ के निमित्त पञ्चदश (१५) निदिध्यासन के अङ्ग कहते हैं। इन्हीं सम्पूर्ण अङ्ग द्वाराही निदिध्यासन करे ॥१००॥

निदिध्यासाद्दतैप्रासि र्नभवेतसच्चिदात्मनः।
तस्माद्ब्रह्मनिदिध्यासेत् जिज्ञासुःश्रेयसेचिरम्

निदिध्यासन विना सच्चिदानन्द मय ब्रह्मज्ञान नहीं होस

कता अतएव जिज्ञासुगण अपने मङ्गल लाभ के निमित्त सर्व्वदाहो ब्रह्ममें निदिध्यासन करैं ॥१०२॥

यमोहिनियमस्त्यागो मोनंदेशश्चकालता।
आसनंमूलबन्धश्चदेहसाम्यञ्चदृक्स्थिति १०२
प्राणसंयमनञ्चैव प्रत्याहारश्चधारणा।
आत्माध्यानंसमाधिश्च प्रोक्तान्यङ्गानिवैक्रमात्

यम, नियम, त्याग, मौन, काल, आसन, मूलबन्ध, देहसाम्य, दृक्स्थिति, प्राणसंयमन, प्रत्याहार, धारणा, आत्मध्यान और समाधि यह सम्पूर्ण अङ्ग क्रमसे कथित हुएहैं १०३

सर्व्वंब्रह्मेतिविज्ञाना दिन्द्रियग्रामसंयमः।
यमोयमितिसंप्रोक्तोऽभ्यसनीयोमुहुर्मुहुः १०४

सम्पूर्णही ब्रह्महै, इस प्रकार निश्चय करके इन्द्रिय समस्त के संयम को यम कहते हैं, यह बारम्बार अभ्यास करे १०४

सजातीयप्रवाहश्च विजातीयतिरस्कृतिः।
नियमोहिपरानन्दोनियमात्क्रियतेबुधैः १०५

सजातीय प्रवाह अर्थात् मैं ब्रह्महूं यह ज्ञान प्रवाह और विजातीय तिरस्कार अर्थात् ब्रह्मके अतिरिक्त जगत्में मिथ्या ज्ञान इसकोही नियम कहते हैं यह नियम अवलम्बन करके पण्डित गण परमानन्द लाभ करते हैं ॥१०५॥

त्यागःप्रपञ्चरूपस्य चिदात्मत्वाविलोकनात्।
त्यागोहिमहतांपूज्यःसद्योमोक्षमयोयतः १०६

चिन्मय आत्मा का तत्वावलोकन अवलम्बन करके जो प्रपञ्च का (घटपटादि नामरूप व्यवहृत पदार्थ का) परित्याग इसकोही त्याग कहते हैं, इसका महात्मा भी आदर करते हैं क्योंकि यह सदा मोक्षप्रद है ॥१०६॥

यस्माद्वाचोनिवर्त्तन्ते अप्राप्यमनसासह।
यन्मौनंयोगिभिर्गम्यं तद्भवेत्सर्व्वदाबुधः १०७

जो वाक्य और मनके अगोचर एवं योगिगणों के लभ्य हैं, वह परम ब्रह्मही मौन हैं, पण्डितगण मैं ब्रह्महूं इस प्रकार ब्रह्मका अनुसन्धान करें ॥१०७॥

वाचायस्मान्निवर्त्तन्ते तद्वक्तुंकेनशक्यते।
प्रपञ्चोयदिवक्तव्यः सोऽपिशब्दविवर्ज्जितः॥
इतिवातद्भवेन्मौन सतांसहजसंज्ञितं। गिरा
मौनन्तुवालानां प्रयुक्तंब्रह्मवादिभिः॥१०९॥

जो वाक्य के अगोचर हैं उनको कौन वर्णन करसकताहै यदि बल प्रपञ्च के विषय वर्णन किया जाय तो भी शब्द वर्जित अर्थात् सत् असत् इत्यादि नानाप्रकार के पदार्थ हैं वह भी वर्णन करके शेष नही कियाजाता। इसको भी मौन कहते हैं, यही मौन साधुगणों को स्वभाव सिद्धि है ब्रह्मवादि गण क्या वालकगणों को वाक्य हीनता को मौन कहते हैं १०९

आदावन्तेवमध्येच जनोयस्मिन्नविद्यते।
येनेदंसततंव्याप्तं सदेशोविजनःस्मृतः॥११०॥

जिसमें आदि मध्य और अन्त में जन नहीं रहता, उस देश कोही निर्ज्जन देश कहते हैं सदा जनशून्य देशही योग-साधन के उपयुक्त देश है ॥११०॥

कलनात्सर्व्वभूतानां ब्रह्मादिनांनिमेषतः।
कालशब्देननिर्द्दिष्टोऽखण्डानन्दकाद्वयः १११

निमेष में ब्रह्मादि सर्व्वभूतों के कलन (सृष्टि, स्थिति, और विनाश) मे अखण्डानन्द स्वरूप अद्वयही काल शब्द में निर्दिष्टि हैं ॥१११॥

सुखेनैवभवेद्यस्मि न्नजस्रंब्रह्मचिन्तनं।
आसनंतद्विजानीयान्नेतरत्सुखनाशकं ११२

जो सुखरूप ब्रह्ममें कर्त्तव्याकर्त्तव्य चिन्ता नहीं उनतीनों कालको अवस्थाओं में ब्रह्महो आसन शब्द वाच्य है, इसके अतिरिक्त सम्पूर्ण हो सुख नाशक है ॥११२॥

सिद्धंयत्सर्व्वभूतादि विश्वाधिष्ठानमव्ययम्।
यस्मिन्सिद्धाःसमाविष्टा स्तद्वैसिद्धासनंविदुः॥

जिसमें सर्व्वभूत सिद्ध हैं और जिसमें सिद्ध पुरुष गण समाविष्ट हैं, जो विश्व के अधिष्ठान स्वरूप और अव्यय हैं, उसकोही सिद्धासन जानना चाहिये ॥११३॥

यन्मूलंसर्व्वभुक्तानां यन्मूलंचित्तबन्धनं।
मूलबन्धःसदासेव्योयोग्योसौराजयोगिनां ११४

जो आकाशादि सर्व्वभूतका मूल (आदिकारण) है जो चित्त

बन्धन का कारण स्वरूप अज्ञान का मूल है, वही मूलबन्ध है यह मूल बन्धराज योगी गणोंको भी सेवनीय है ॥११४॥

अज्ञानांसमतांविद्यात् समेब्रह्मणिलीयते ।
नोच्चेनैवसमानत्वमृजुत्वंशुष्ककाष्ठवत् ११५

सर्व्वभूत में समदृष्टि द्वारा ब्रह्ममें जो लय है, उसको ही समता कहते हैं, । इसके अतिरिक्त शुष्क वृक्ष की समान ऋजुता को समता नहीं कहते ॥११५॥

दृष्टिंज्ञानमयींकृत्वा पश्येद्ब्रह्ममयंजगत् ।
साहृष्टिःपरमोदारा ननासाग्रेविलोकिनी ११६

दृष्टि को ज्ञानमयी करके उसके द्वारा जगत् को ब्रह्ममय देखे यह परम उदार दृष्टि है । नासाग्र अवलोक नहीं ॥११६॥

दृष्टिदर्शनदृश्यानां विरामोयत्रवाभवेत ।
दृष्टिस्तत्रैवकर्त्तव्याननासाग्रविलोकिनी ११७

जिसमें दृष्टि दर्शन और दृश्यका विराम होता है, उसमें ही दृष्टि करे । केवल नासाग्र अवलोकन न करे ॥११७॥

चित्तादिसर्व्वभावेषु ब्रह्मत्वनैवभावनात् ।
निरोधःसर्व्ववृत्तीनांप्राणायामःसउच्यते ११८

चित्तादि सर्व्वप्रकार भाव पदार्थ में ब्रह्मत्व भावना से जो सर्व्वप्रकार इन्द्रिय बृत्तिका निरोध होता है, उसको ही प्राणायाम कहते हैं ॥११८॥

निषेधनंप्रपञ्चस्य रेचनाख्यःसमीरणः ।

ब्रह्मैवास्तीतियावृत्तिः पूरकोवायुरीरितः ११९

प्रपञ्च का निषेध अर्थात् मिथ्यात्व परिज्ञान कोही रेचक कहते हैं। एक ब्रह्महो सर्व्वमय है, इस प्रकार जो वृत्ति है, उसको ही पूरक कहते हैं ॥११९॥

ततस्तद्वृत्तिनैश्चल्यं कुम्भकप्राणसंयमः ।
अयञ्चापिप्रवुद्धाना मज्ञानांप्राणपीडनम् १२०

अनन्तर एक ब्रह्महो सर्व्वमय है इस वृत्ति के निरोधको कुम्भक कहते हैं, इस प्रकार रेचक पूरक और कुम्भकात्मक प्राणायाम हो ज्ञानि गणोंका प्राणायाम है, अज्ञानिगण प्राण वायु के निरोध को प्राणायाम कहते हैं ॥१२०॥

विषयेस्वात्मतांदृष्ट्वा मनसश्चितिमज्जनम् ।
प्रत्याहारासविज्ञेयोऽभ्यसनीयोमुमुक्षुभिः १२१

विषय में आत्मानात्मत्व अनुसन्धान करके अनात्मा निश्चय पूर्व्वक जो चिन्मय परमात्मा में मनो निमज्जन है उसको ही प्रत्याहार कहते हैं मुमुक्षुगण यह प्रत्याहार अभ्यास करैं।

यत्रयत्रमनोयाति ब्रह्मणस्तत्रदर्शनात् ।
मनसोधारणञ्चैव धारणासापरामता १२२

मन जिस जिस विषय में गमन करता है, उसी उसी विषय में ब्रह्म स्वरूप देखकर जो मन संस्थापन है उसको ही उत्कृष्ट धारण कहते हैं ॥१२२॥

ब्रह्मैवास्तीतिसद्वृत्य निरालम्वतयास्थितिः।

ध्यानशब्देनविख्यातापरमानन्ददायिनी १२३

सम्पूर्ण वाधो अतिक्रम करके देहानुसंधान परित्यागपूर्वक "सर्वहो ब्रह्म मय है" यह जानकर जो ब्रह्म स्वरूप में अवस्थान है, उसको आत्मध्यान कहते हैं। इस में परमानन्द लाभ होता है ॥१२३॥

निर्व्विकारतयावृत्या ब्रह्मकारतयापुनः ॥
वृत्तिविस्मरणंसम्यक् समाधिज्ञानसंज्ञकः १२४

निर्व्विकार चित्त में अपनपे को ब्रह्मस्वरूप जानकर जो सब प्रकार प्रपंचके भावका परित्यागहै, उसको समाधिकहतेहैं॥

इमंचाकृत्रिमानन्दं तावत्साधुसमाभ्यसेत्
वश्योयावत्क्षणात्पुंसःप्रयुक्तसन्भवेत्स्वयम्

जबतक पूर्वोक्त आनंद पुरुषके वशमें नहो तबतक कृत्रिम आनन्द (निदिध्यान) का भलो भाँति अभ्यास करै, फिरजब निदिध्यानादि द्वारा स्वयं ब्रह्मस्वरूपहो, तबफिर निदिध्यास नादि का प्रयोजन नहीं रहता ॥१२६॥

ततःसाधननिर्युक्तः सिद्धोभवतियोगिराट्
तत्स्वरूपंनचैतस्य विषयोमनसोगिराम् १२५

पूर्वोक्त प्रकार से योगाभ्यास द्वारा सिद्धि होने पर सब प्रकार साधन परित्याग होते हैं, उसपर ब्रह्मका स्वरूप योगी व्यक्ति के भी वाक्य और मन का विषय नहीं है ॥१२६॥

समाधौक्रिमाणेतु विघ्नान्यायातिवैवलात्

अनुसन्धानराहित्यमालस्यंभोगलालसम् १२७
लयस्तमश्चविक्षेपो रसास्वादश्चशून्यता।
एवंयद्विघ्नबाहुलंत्याज्यंब्रह्मविदाशनैः ॥१२८॥

समाधि साधन करने के समय अनेक प्रकार के विघ्नबल पूर्वक आनकर उपस्थित होते हैं, यथा, अनुसंधान, राहित्य आलस्य, भोग लालसा, निद्रा, कार्याकार्य का अविवेक, विक्षेप (विषयानुराग) रसास्वाद (अपने को धन्य मान कर आनन्दानुभव) और शून्यता (राग्यादि द्वारा चित्तका वैकल्प) इत्यादि ब्रह्मविद्गण इनसब विघ्नोंको निवारण करनेके लिये सावधान होकर तत्पर रहैं ॥१२७-१२८॥

भाववृत्याहिभावत्वं शून्यवृत्याहिशून्यता।
ब्रह्मवृत्ताहिब्रह्मत्वं तथापूर्णत्वमभ्यसेत् १२९

जिसके चित्त को वृत्ति घटादि भाव रूप के अनुगत होतो है उसके मन में भाव पदार्थही प्रकाशित होता है जिसका मन शून्य वृत्ति अवलम्बन करती है, उसका चित्त शून्यमय होता है और जिसके चित्त की वृत्ति ब्रह्मस्वरूप में जाती है, वह पूर्ण ब्रह्मत्व लाभ करता है अतएव जिस के द्वारा पूर्णब्रह्मत्व लाभ होसके-उसका अभ्यास करे ॥१२९॥

येहिवृत्तिंजहात्येनां ब्रह्माख्यांपावनींपरां।
तेतुवृथैवजीवन्ति पशुभिश्चसमानराः ॥१३०

जो परम पवित्र और सर्वोत्कृष्ट इस ब्रह्म वृत्ति को परि-

त्याग करता है वह वृथा जीवन धारण करता है, क्योंकि वह मनुष्य पशु तुल्य है ॥१३०॥

येहिवृत्तिंविजानन्ति ज्ञात्वापिवर्द्धयन्तिये।
तेवैसत्पुरुषाधन्या वन्द्यास्तेभुवनत्रये १३१

जो ब्रह्म वृत्ति को जानता है और जानकर जो उस वृत्ति को वर्द्धित करता है वही सत्पुरुष धन्य और त्रिभुवनमें पूजनीय हैं ॥१३१॥

येषांवृत्तिःसमावृद्धा परिपक्वाचसापुनः ।
तेवैसद्ब्रह्मतांप्राप्तानेतरेशब्दवादिनः ॥१३२॥

जिस को ब्रह्मवृत्ति बढ़कर परिपक्वता को प्राप्त होती है, वह सत्स्वरूप ब्रह्मत्वलाभकरतेहैं और जो केवल वागाडम्बर करते हैं उनको ब्रह्म का लाभ नहीं होता ॥१३२॥

कुशलाब्रह्मवार्त्तायां वृत्तिहीनाःसुरागिणः।
तेप्यज्ञानितयानूनं पुनरायान्तियान्तिच१३३

जो ब्रह्म वृत्ति हीन होकर ब्रह्मविद्याके विचारमें कौशल प्रकाश करते हैं और ब्रह्म के विषय में प्रीति दिखाते हैं, वह भी अज्ञान के वश बारम्बार संसार में आते जाते हैं ॥१३३॥

निमेषर्द्धंनतिष्ठन्ति वृत्तिंब्रह्ममयीविना ।
यथातिष्ठन्तिब्रह्माद्याः सनकाद्याःशुकादयः॥

जैसे ब्रह्मादि देवगण, सनकादि मुनिगण, और शुकादि ब्रह्म परायणगण सर्वदा ब्रह्म निष्ठ थे, इसीप्रकार मुमुक्षुव्यक्ति

गण ब्रह्ममयी वृत्ति (ब्रह्मानुसंधान) विना निमेषार्द्धभी व्यतीत नहीं करते ॥१३४॥

कार्य्येकारणताजाता कारणेनहिकार्य्यता ।
कारणत्वंततोगच्छेत् कार्य्याभावेविचारतः ॥

कार्य में कारणता रहतीहै किन्तु कारणमें कार्यत्व दिखाई नहीं देती, कार्य का भाव होनेपर कारणता प्राप्त होती है इस प्रकार विचार करके आकाशादि समस्त कार्य अनित्य और केवल कारण स्वरूप ब्रह्मकोही सत्य जाने ॥१३५॥

अथशुद्धंभवेद्वस्तु यद्वैवाचामगोचरम् ।
द्रष्टव्यंमृद्घटेनैव दृष्टान्तेनपुनःपुनः ॥१३६॥

अनन्तर कार्य कारण का भाव निवृत्त होनेपर शुद्धस्वरूप वाक्य और मन के अगोचर जो ब्रह्म वस्तु है, वही रहती है जिस प्रकार घट नाश होने से मृत्तिकाही रहती है ॥१३६॥

अनेनैवप्रकारेण वृत्तिर्ब्रह्मात्मिकाभवेत् ।
उदेतशुद्धचित्तानां वृत्तिज्ञानंततःपरम् ॥१३७॥

इस प्रकार से चित्त शुद्ध व्यक्तिगणों को वृत्तिका ज्ञान होता है। अनन्तर ब्रह्मात्मिका वृत्ति है ॥१३७॥

कारणंव्यतिरेकेण पुमानादौविलोकयेत् ।
अन्वयेनपुनस्तद्धि कार्य्येप्रपश्यति ॥१३८॥

मुमुक्षुगण प्रथमतः कारण के कार्य की उत्पत्ति नहीं होती इसप्रकार व्यतिरेकानुमान से कारण निश्चय करैं। कार्य देख

कर जब यह कार्य है तो अवश्यही कोई कारण रहेगा। इस प्रकार अहित्वयानुमानसे उस कारण को सदा निर्णय करे १३८

कार्य्येहिकारणंपश्येत् पश्चात्कार्य्यंविसर्ज्जयेत्
कारणत्वंततोगच्छेद् वशिष्टंभवेन्मुनि॥१३९॥

प्रथम तो कार्य में कारण का निश्चय करके फिर कार्य को परित्याग करै। कार्य रहित होनेपर कारणत्व आपही जाता रहेगा, इस प्रकार कार्य कारण रहित होनेसे मुनिगण स्वयं चिन्मय स्वरूप होते हैं ॥१३९॥

भावितंतीव्रयोगेन यद्वस्तुनिश्चयात्मना।
पुमांस्तद्धिभवेच्छीघ्रं ज्ञेयंभ्रमरकीटवत् १४०॥

निश्चयात्मा पुरुषगण तो प्रभावना से जिस वस्तु की चिन्ता करते हैं, वह शीघ्र भ्रमर कीट की समान वही वस्तु होसकते हैं और सामान्य मनुष्य भी सदा चिन्ता से ब्रह्म होसकते हैं ॥१४०॥

अदृश्यंभावरूपंच सर्व्वमेवचिदात्मकम्।
सावधानतयानित्यं स्वात्मानंभावयेद्बुधः॥

ज्ञानी व्यक्तिगण सदा सावधान होकर जगत् स्वरूप में चिन्मय ब्रह्म की चिन्ता करैं ॥१४१॥

दृश्यमदृश्यतांनीत्वा ब्रह्मकारेणचिन्तयेत्।
विद्वान्नित्यसुखेतिष्ठेद्धियाचिद्रसपूर्णया१४२॥

दृश्य वस्तु को अदृश्यत्व ज्ञान पूर्वक ब्रह्मके स्वरूप को जाने

तो ज्ञानो व्यक्ति चिन्मय रस पूर्ण बुद्धि में नित्य सुख सहित अवस्थान करते हैं ॥१४२॥

एभिरङ्गैः समायुक्तो राजयोगउदाहृतः ।
किञ्चित्पक्ककषायाणां हटयोगेनसंयुतः १४३

इस अंग समायुक्त योगको राज योग कहते हैं, जिनका विषयानुराग निवृत्त होगया है उनके पक्षमें हट योग युक्त योगही राज योग है ॥१४३॥

परिपक्कंमनोयेषां केवलोऽयञ्चसिद्धिदः ।
गुरुदैवतभक्तानां सर्व्वेषांसुलभोभवेत् १४४॥

इतिश्रीमच्छङ्कराचार्य्यविरचिताअपरोक्षानु-भूति समाप्तम् ॥

जिनका मन परिपक्क होगया है, उनके पक्षमें केवल यही योग सिद्धि प्रद है। जो गुरु और देवता के भक्त हैं, उन सबकोही यह राजयोग अत्यन्त सुलभ है ॥१४४॥

इतिश्री अपरोक्षानुभूति समाप्तम् ॥

॥ जाहिरात ॥

बृहत्साबरतंत्र विधान तथा भाषाटीका सहित, मूल्य	१॥)
डामरतंत्र भाषा टीका सहित	१)
बीरभद्र उड्डीस	॥।)
यक्षिणी साधन भाषा टीका सहित	।=)
पंचदशीतंत्र भाषा टीका सहित	।)
शाक्तानंद तरंगिणी (गुप्तग्रन्थ भषा टीका सहित)	१)
अष्टसिद्धि	॥)
जागतीकला दूसरीबार की छपी	१≣)
नित्यतंत्र भाषा टीका सहित	॥।≡)
कौतुकरत्न मंजूषा आठवींबार छपी है	२)
हिंदुस्तान का दंडसंग्रह ताजीरातहिन्द	१॥)
दत्तात्रेय २४ पटल	॥।)

हमारा ठिकाना :—

पण्डित हरिशङ्करजी शास्त्री

अध्यक्ष संस्कृत महाविद्यालय

हरिद्वार

॥ शिवोत्कीलितसावरतन्त्र ॥

॥ विधान तथा भाषाटीका सहित ॥

पाठकगण! जितने मन्त्र, तन्त्र, जन्त्र हैं वे समस्त शिवजीने कलियुगमें कील दिये हैं इसकारण! सिद्ध होतेनहीं। कलियुग में सिद्ध होनेके सावरमंत्र शिवजीने बनाये हैं। जो तत्काल फल देतेहैं, प्रत्यक्षमें देखाजाताहै कि बिच्छू. सर्प. सिंह आदि जीव इन सावरमंत्रोंसेही पकड़े जातेहैं सावरमंत्रोंसेही समस्त रोगों की चिकित्सा होतीहै, मारण, मोहन, बशीकरण, उच्चाटनआदि षट्कर्मसावरमंत्रोंसेही सिद्ध होतेहैं अन्यसे नहीं, सावर। मंत्रों द्वारा बंगाले आदिमें जादू. टोना, छिपजाना; तोता, बकराबना लेना तथा दूर देश की बस्तु मँगा लेना भूत, प्रेत, पिशाच डाकिनी, शाकिनी, यक्षिणी, को वश में कर लेना इत्यादि इन्द्रजालविद्या समस्त सावर मंत्रोंसे सिद्ध होती हैं॥

आज हम इसअत्यंत गोप्य सावरतंत्रको जगत् कल्याणकेअर्थ प्रकाशित कियेदेते हैं। यह वहीसावरतंत्र है जिसकोमनुष्यथोड़े दिनमें सुख पूर्वक साधन करके बिचित्र२ आश्चर्य२ कार्य सिद्ध करलेताहै हमने यह सावरतंत्र बड़े परिश्रम तथा धनव्यय से जगत् प्रसिद्ध माहात्मा कामराजसिद्धद्वारा प्राप्त कियाहै। आज तक जितनी पुस्तकेंमंत्र, तंत्रशास्त्रकीछपीहैं वे समस्त शिवजीके कीलनेसे फलरहितहैं और मनुष्य वृथा न पच मरें केवल यही सावरतन्त्रमन्त्र शास्त्र की मर्य्यादा रखनेको शिवजीने रचा है जिसके देखनेसे अविश्वासी मनुष्यों को भी विश्वास करना पड़ता है बहुतसे विश्वासी प्रसिद्ध २ पुरुषों के सार्टीफिकट हमारे पास अवस्थित हैं बश हम इतनाही लिखते हैं कि एक बार इस अनुपम ग्रन्थको मँगाकर परीक्षा करें जिससे हमारा परिश्रम सफल हो। ग्रन्थ उत्तम टाइप, जिल्द सहित है तिस पर भी मूल्य सर्व सुगम डाक व्यय सहित १॥) रु० मात्र है

मिलनेका पता पं० हरिशङ्करशास्त्री हरिद्वार